International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(5): 123-125

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(5): 123-125
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 21-07-2017
Accepted: 22-08-2017

Dr. Parshotam Sharma
Teacher in Government Middle School Dramani Kathua Jammu and Happy, Jammu & Kashmir, India

Correspondence
Dr. Parshotam Sharma
Teacher in Government Middle School Dramani Kathua Jammu and Happy, Jammu & Kashmir, India

दक्षिण भारतीय शैव परम्परा में महेश्वरानन्द का स्थान निरूपण

Dr. Parshotam Sharma

प्रस्तावना

शैव दर्शन का प्रभाव भारत के उत्तर एवं दक्षिण दोनों भागों में अवस्थित रहा। उत्तरभारत में जहाँ कश्मीर (श्रीनगर) इसका केन्द्र बना, और यहाँ पल्लवित शैव दर्शन काश्मीर शैव दर्शन कहलाया तो वहीं दक्षिण में इसका केन्द्र कर्नाटक एवं आन्ध्र बना, एवं वहाँ पल्लवित दर्शन शैव दर्शन कहलाया। शैव परम्परा में प्रचलित जनश्रुतियों के अनुसार भगवान शिव ने शैवागमों के प्रचार के लिए महर्षि दुर्वासा को निर्देश दिया। दुर्वासा ने शैवागमों की शिक्षा अपने तीन मानस पुत्रों (शिष्यों) त्र्यम्बक, अमर्दक और श्रीनाथ को दिया। त्र्यम्बक को दी गई शिक्षा पर काश्मीर शैव दर्शन आधारित है।[1] ऐसा कहा जाता है कि दुर्वासा द्वारा अर्मदक और श्रीनाथ को दी गई द्वैत और द्वैताद्वैत शिक्षाओं पर शैव–सिद्धान्त आधारित है, जिसके आधिकारिक स्त्रोत 28 आगम हैं, जिनमें 10 द्वैतवादी और 18 द्वैताद्वैतवादी हैं। द्वैतवादी आगम सीधे ईश्वर द्वारा प्रकाशित किये गए कहे जाते हैं। ये हैं – कामिक, योगज, चिन्त्य, कारण, अजीत, दीप्त, सूक्ष्म, साहस्त्रक, अंशुमान और सुप्रभ। द्वैताद्वैतवादी आगम साधकों द्वारा मनुष्यों द्वारा अनुभूति किये गये कहे जाते हैं। ये हैं – विजय, निष्वास, स्वायम्भुव, आग्नेयक, भद्र, रौरव, माकुट, विमल, चन्द्रहास, मुखयुगबिम्ब, उद्गी, ललित, सिद्ध, नारसिंह, पारमेश्वर, किरण और पर आगम।

यह दर्शन दक्षिण भारत में विकसित हुआ। दक्षिण की परम्पराओं के अनुसार भगवान शिव ने स्कन्द और नन्दी को शैव–सिद्धान्त का ज्ञान प्रत्यक्ष रूप से दिया तथा उन्हें आचार्य नियुक्त किया। इन आचार्यों द्वारा दो भिन्न गुरु परम्पराएँ स्थापित हुई जो स्कन्द परम्परा और नन्दी परम्परा के रूप में ज्ञात हैं। ऐसा कहा जाता है कि जो कुछ शिव ने स्कन्द को प्रत्यक्ष रूप से शिक्षा दी, उसे उन्होंने (स्कन्द ने) वामवेद को उपदेश दिया तथा वामदेव ने नीलकण्ठ शिवाचार्य को। उनके द्वारा वह शिक्षा विश्वेश्वर को प्राप्त हुई तथा उनसे सदाशिव शिवाचार्य को। वे शिक्षाएँ शिवाग्रयोगी को प्राप्त हुई, जिन्होंने उसे अपने शिष्यों को प्रदान किया।

शैव–सिद्धान्त का दार्शनिक रूप 28 आगमों तथा अन्य उपागमों पर लिखी गई वृत्तियों में मिलता है। इनमें पौष्कर–आगम, मृगेन्द्र–आगम और मातङ्ग आगम पर लिखी गई वृत्तियाँ महत्त्वपूर्ण हैं। भट्ट रामकण्ठ (11वीं शती ई०) की मातङ्गवृत्ति, नारायणकण्ठ (11वीं शती ई०) की मृगेन्द्रवृत्ति तथा अघोर शिव (12वीं शती ई०) की 'मृगेन्द्र वृत्ति दीपिका' है। उमापति शिवाचार्य (14वीं शती ई०) का पौष्कर भाष्य तथा धारा के राजा भोज (11वीं शती ई०) की 'तत्त्व प्रकाशिका' है। 'तत्त्व प्रकाशिका' में शैव–सिद्धान्त के छत्तीस तत्त्वों की प्रस्तुति है। इस कृत्ति पर दो टीकाएँ – एक श्रीकुमार की और दूसरी अघोर शिव की है। सद्योज्योति (10वीं शती ई०) द्वारा लिखी गई 'तत्त्वसंग्रह' और 'तत्त्व–त्रय–निर्णय' महत्त्वपूर्ण है, जो अघोर शिव के अनुसार रौरव और स्वायम्भुव आगमों के विद्यापाद पर आधारित है। सद्योज्योति की ही 'भोग कारिका' है। भट्ट रामकण्ठ की 'नाद कारिका' जिस पर अघोर शिव की टीका भी है, महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि भाषादर्शन पर शैव–सिद्धान्त की यह अकेली कृति है।

शैव सिद्धान्त के दार्शनिक विकास में शैव सन्तों द्वारा शिव की स्तुति में लिखे गये गीतों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। इन गीतों की नाम्पीय–य–आन्तार नाम्पी ने ग्यारहवीं शती ई० में सङ्कलित किया, जो बारह तिरूमुरै के नाम से ज्ञात है। ''तिरूमरै'' की प्रथम सात पुस्तकें – 'तेवारम' है, जो अप्पर, सम्बन्दर और सुन्दरर द्वारा शिव की स्तुति में लिखे गये भक्तिपरक गीतों का सङ्कलन है। इन पुस्तकों को 'तमिल वेद' भी कहा जाता है। अप्पर का समय सातवीं शताब्दी अथवा नवीं शताब्दी ई० का पूर्वकाल था।

शैव सन्तों के बाद शैव–सिद्धान्त के विकास में शैव–सिद्धान्ती दार्शनिकों का योगदान महत्त्वपूर्ण माना जाता है। शैव–सिद्धान्त के महत्त्वपूर्ण दार्शनिक विचारकों का समय आठवीं शती ई० से तेरहवीं शती

ई० माना जाता है। शैव–सिद्धान्त के दार्शनिक विकास में प्रथम नाम 'मेइकण्डदेव' का है, जिन्होंने इस दर्शन को सुव्यवस्थित दार्शनिक रूप दिया। इस काल की दार्शनिक कृत्तियों को 'मेइकण्ड शास्त्र' कहा जाता है। यद्यपि सर्वप्रथम मेइकण्डदेव ने ही इस दर्शन को सुव्यवस्थित रूप दिया, किन्तु इनके पूर्व की दो कृतियाँ भी महत्त्वपूर्ण होने से मेइकण्ड शास्त्र में गिनी जाती हैं।

महार्थम?जरी में महेश्वरानन्द का स्थान निरूपण

महार्थम?जरी स्वप्नोपदेष्टा सिद्धा योगिनी का प्रसाद है। यह जागृति की कृति नहीं है, प्रत्युत स्वप्नोपदिष्ट महाजागृति है। महार्थम?जरी ग्रन्थ के प्रणेता का नाम महेश्वरानन्द है। उनको 'गोरक्षनाथ' नाम से भी अभिहित किया गया है। गुरुनाथपरामर्श (श्लोक 39) के अनुसार महेश्वरानन्द के पिता का नाम माधव था। ''आल इण्डिया ओरियेण्टल कान्फ्रेंस'', श्रीनगर, अक्टूबर 1961 के अध्यक्षीय भाषण में वी० राघवन महोदय ने कहा था कि महेश्वरानन्द दक्षिण भारत में जो 'चिदम्बरम' नामक स्थान है, वहाँ चोलवंश के राज्यकाल में विद्यमान थे। महेश्वरानन्द ने अपने को महाप्रकाश का शिष्य बताया है –

गोरक्षो लोकधिया देशिकदृष्टया महेश्वरानन्दः।
उन्मीलयामि परिमलमन्तर्ग्राह्यं महार्थम?जर्याम्।।[2]

महेश्वरानन्द ने अपने को देवपाणि सम्प्रदाय का अनुवर्ती कहा है –

''श्रीदेवपाणिसम्प्रदायानुप्रविष्टैरस्माभिरनुसन्धीयते।।''[3]

महेश्वरानन्द ने कहा है कि मुझे 'प्रत्यभिज्ञामार्ग' के अनुगमन से ही आत्मज्ञान हुआ था। अतः स्पष्ट है कि वे प्रत्यभिज्ञा (त्रिकमत) के अनुयायी थे।

महेश्वरानन्द क्षेमराज के उपरान्त विज्ञानभैरव के टीकाकार शिवोपाध्याय से पहले उत्पन्न हुये थे। महेश्वरानन्द ने क्षेमराज का नामोल्लेख किया है और शिवोपाध्याय ने महेश्वरानन्द का भी नामोल्लेख किया है।[4] स्पष्ट है कि महेश्वरानन्द शिवोपायध्याय के पूर्ववर्ती थे।

काश्मीर के वर्तमान कौलों की मान्यता है कि महेश्वरानन्द उनके पूर्वज थे। वे दक्षिण भारत से आकर कश्मीर में बस गये थे। इस प्रकार महेश्वरानन्द 16वीं शती ईस्वी से पहले तो विद्यमान थे ही। महेश्वरानन्द ने अपने लिये 'योगीन्द्र' शब्द का भी उल्लेख किया है। साहिब कौल या आनन्दनाथ शैवाचार्य परम्परा में एक प्रमुख व्यक्तित्त्व थे। वे कौल परम्परा के अनुयायी थे। महार्थम?जरीकार महेश्वरानन्द ने अपनी व्याख्या स्वोपज्ञ में ऋजुविमर्शिनीकार शिवानन्द को अपना परम गुरु कहा है। महेश्वरानन्द ने 'एतच्चास्मत्परम– गुरुकर्तृके श्रीमदृजुविमर्शिन्यादौ विमर्शनीयम्' कहकर शिवानन्द को अपना परमगुरु स्वीकार किया है।

महार्थम?जरी परिमल में महेश्वरानन्द जी द्वारा 'अथ या कालयोगेन शिवानन्दस्य धीमतः' कहे जाने तथा –

अथ कालक्रमवशाच्चोलदेशाशिरोमणि।
महाप्रकाशो नामासीद् देशिको दृक्क्रियोत्तरः।।
तस्य शिष्योऽभवद्धीमान् गोरक्षो नाम वश्यभाक्।
महेश्वरानन्द इति प्राप्तपूज्याहयो महान्।।

कहे जाने से भी सिद्ध होता है कि स्वयं शिवानन्द जी भी चोल (केरल) देश के रहने वाले थे। दक्षिणापथ में शिवानन्द के अनेक ग्रन्थ पाये जाते हैं। शिवानन्द, पुण्यानन्द, अमृतानन्द आदि के भी ग्रन्थ दक्षिण भारत के पुस्तकालयों में पाये जाते हैं। स्पष्ट है कि ये सभी आचार्य दक्षिणात्य ही रहे होगे। महार्थम?जरी महाराष्ट्री प्राकृत में निबद्ध है। ऋतुविमर्शिनी प्रत्यभिज्ञादर्शन की प्रतिपादिका है; किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि शिवानन्द कश्मीरी थे। महेश्वरानन्द स्वयमेव भी काश्मीर के प्रत्यभिज्ञादर्शन एवं क्रमदर्शन के प्रतिपादक हैं। उन्होंने अपने को चोल–देश–निवासी स्वीकार भी किया है। ऋजुविमर्शिनी में 'सम्प्रदायस्य कश्मीरोद्भूतत्वात्' कहे जाने के बाद भी शिवानन्द काश्मीर के नहीं थे।यद्यपि लोग महार्थम?जरीकार महेश्वरानन्द को गोरक्षनाथ मानकर उन्हें नव नाथों में प्रसिद्ध गोरक्ष से अभिन्न मानते हैं; किन्तु यह दृष्टि समीचीन नहीं है। महेश्वरानन्द के पूर्व शिवानन्द थे। शिवानन्द के पूर्व क्षेमराज थे। क्षेमराज के पूर्व अभिनवगुप्त थे। अभिनवगुप्त के पूर्व मत्स्येन्द्रनाथ थे। इस स्थिति में भला महेश्वरानन्द के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ कैसे हो सकेते हैं? यदि मत्स्येन्द्रनाथ उनके गुरु नहीं थे तो उन्हें नव नाथों में परिगणित गोरक्षनाथ से अभिन्न कैसे माना जा सकता है? नव नाथों में परिगणित गोरक्षनाथ के गुरु तो मत्स्येन्द्रनाथ थे, न कि महाप्रकाश (शिवानन्द के शिष्य)।

महेश्वरानन्द ने कभी भी अपने गुरु के रूप में मत्स्येन्द्रनाथ का स्मरण (या उल्लेख) नहीं किया है। यदि हम नाथपंथी गोरक्षनाथ के हठयोगात्मक नाथ सम्प्रदाय के सिद्धान्तों पर विचार करें तो महेश्वरानन्द के सिद्धान्त उनसे मेल भी नहीं खाते। दोनों ही दृष्टियों में स्पष्टतया पार्थक्य परिलक्षित होता है।

शिवानन्द अपनी ''ऋतुविमर्शिनी'' टीका में सोमशम्भुकृत कर्मकाण्डक्रमावली का उद्धरण देते हैं। शम्भुनाथ ने इस ग्रन्थ का प्रणयन ई० 1073 में किया था। शिवानन्द ने ''ऋजुविमर्शिनी'' टीका में दो–तीन बार नागभट्ट एवं उनके ग्रन्थ ''त्रिपुरासारसमुच्चय'' के श्लोकों को भी उद्धृत किया गया है। नागभट्ट (जैन सम्प्रदाय के हस्तिमल्ल) ई० सन् 13वीं सदी के थे। स्पष्ट है कि महेश्वरानन्द (14वीं सदी) मत्स्येन्द्रनाथ (9वीं या 10वीं सदी) के शिष्य नहीं थे, अतः व नव नाथों में सम्मिलित गोरक्षनाथ से अभिन्न नहीं थे। महेश्वरानन्द का समय (स्थितिकाल) ई० सन् 14वीं सदी का है। यदि महेश्वरानन्द (नाथ–परम्परा के) गोरक्षनाथ से अभिन्न होते तो मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य हुये होते और इस स्थिति में उन्होंने मत्स्येन्द्रनाथ की कौल–धारा का प्रतिपादन किया होता; किन्तु ऐसा नहीं है। जैसाकि निम्नलिखित गाथा से प्रतिपादित होता है –

1. महेश्वरानन्द न कथमपि भवितुमर्हति नाथसम्प्रदायप्रवर्तको गोरक्षनाथः।
2. गोरक्षनाथस्य हठयोगिनी नाथसम्प्रदायप्रवर्तकस्य सिद्धान्तानां नैव किमपि साम्यमवलोक्यत इत्युभयोः पार्थक्यमेवाङ्गी कर्तव्यम्।
3. गोरक्षनाथोऽपि नैव भवति साक्षाच्छिष्यो मत्स्येन्द्रनाथस्य न च प्रातिनिध्यमाचरित मत्स्येन्द्रसिद्धान्तानाम्। गोरक्षनाथादिभन्न एवायं महेश्वरानन्दः।

महेश्वरानन्द ने महार्थम?जरी में गाथाओं की संख्या सत्तर रखी है– ऐसा क्यो?

शिवानन्दमुनि – विरचित सुभगोदय में, सुभगोदयवासना एवं सुभगोदयप्रभा में तथा शिवानन्द के पौत्र चिदानन्द के पुत्र कण्ठानन्द के द्वारा प्रणीत निष्कल क्रम में भी 70 ही श्लोक हैं। महेश्वरानन्द ने शिवानन्द, महाप्रकाश एवं महेश्वरानन्द तीनों नामों का एक ही स्थल पर यथाक्रम उल्लेख किया है।[5]

गोरक्षनाथ जी ने सिद्धसिद्धान्तपद्धति में कहा है कि – ''उक्तं च शिवानन्दाचार्यैः – सर्वशक्तिप्रसर सङ्कोचाभ्यां जगत्सृष्टिः संहृतिश्च भवत्येव न सन्दोहः तस्मात् तां मूलमित्युच्यते। अतः प्रायेण सर्वसिद्धा मूलाधाररता भवन्ति।'' इस वाक्य में शिवानन्द के पूर्व किसी सम्मानजनक विशेषण का प्रयोग नहीं किया गया है; जबकि (यदि वे परमगुरु थे तो) यह होना चाहिए था।

चोलजनपदाभिजन महेश्वरानन्द पहले 'गोरक्ष' नाम से प्रसिद्ध थे। इसी कारण इन्हें नाथपन्थियों के नव नाथों में प्रख्यात गोरक्षनाथ से अभिन्न स्वीकार कर लिया गया था और इस धरातल पर उन्हें मत्स्येन्द्र नाथ का शिष्य भी स्वीकार कर लिया गया; किन्तु यह मत समीचीन नहीं है।

ऋजुविमर्शिनीकार शिवानन्द का काल ईसा सन् 13वीं शताब्दी का अन्तिम भाग है। योगिनीहृदयदीपिकाकार का काल ईसा सन् 14वीं शती का अन्तिम भाग है। शिवानन्द (13वीं शती का उत्तरार्द्ध) तथा अमृतानन्द (14वीं सदी का उत्तरार्द्ध) के मध्यवर्ती काल ही महेश्वरानन्द का आविर्भावकाल है। मत्स्येन्द्रनाथ का समय ईसा की नवीं–दसवीं सदी है।

अभिनवगुप्त ने मत्स्येन्द्रनाथ का सकलकुलशास्त्रावतारक के रूप में बड़ी श्रद्धा के साथ तंत्रालोक में नामोल्लेख किया है। सारांश यह है कि मत्स्येन्द्रनाथ अभिनवगुप्त के पूर्ववर्ती थे। आचार्य क्षेमराज अभिनवगुप्त के शिष्य थे। महेश्वरानन्द ने महार्थम?जरी में क्षेमराज का बड़ी श्रद्धा के साथ नामोल्लेख किया है। शिवानन्द (महेश्वरानन्द के परमगुरु) ने भी क्षेमराज को (ऋजुविमर्शिनी में) सश्रद्ध स्मरण किया है। वे इस स्थल पर स्पन्दनिर्णय एवं शिवसूत्रविमर्शिनी (क्षेमराज की कृत्तियाँ) की दृष्टि के अनुवर्ती भी दृष्टिगत होते हैं। उनके वाक्यों में इनकी स्पष्ट छाया दृष्टिगत होती है।

यदि महेश्वरानन्द नाथपन्थियों में प्रख्यात सिद्ध योगी गोरक्षनाथ हैं तो उन्होंने परिमल में तो स्वरचित पुस्तकों का नामोल्लेख किया है; किन्तु उनमें नाथपंथदीक्षित गोरक्ष नाथप्रणीत–योगबीज, गोरक्षशतक, विवेकमार्तण्ड, अमरौघप्रबंध, सिद्धसिद्धान्त पद्धति आदि को अपनी कृत्तियाँ कहकर उनका उल्लेख क्यों नही किया?

काश्मीरीय शैव–तन्त्रों तदाश्रित साहित्य की खोज में उन्हीं के साथ गोरक्षनाथ प्रणीत एक ग्रन्थ 'अमरौघशासन' भी प्राप्त हुआ है। यह ग्रन्थ संस्कृत में है।

गोरक्षनाथ (नाथपन्थी गोरक्षनाथ) ने कोई भी रचना प्राकृत भाषा में नहीं की है; किन्तु महेश्वरानन्द ने महार्थम?जरी की रचना प्राकृत भाषा में ही की है। इस स्थिति में दोनों को अभिन्न कैसे माना जाय? गोरक्ष नाथ को शिव का अवतार कहा जाता है; किन्तु महेश्वरानन्द को नहीं।

आचार्य क्षेमराज ने महार्थम?जरी ग्रन्थ का प्रत्यभिज्ञाहृदयम् में नामोल्लेख किया है और उसकी दृष्टि की व्याख्या भी की है; अतः स्पष्ट है कि महेश्वरानन्द क्षेमराज के पूर्ववर्ती दार्शनिक थे। क्षेमराज प्रत्यभिज्ञाहृदयम् के सूत्र 11वें में कहते हैं –

> ''श्रीमन्महार्थम?जरीदृष्टया दृगादिदेवीप्रसरणक्रमेण यधत् आभाति तत्तत् सृज्यते, तथा सृष्टे पदे तत्र यदा प्रशान्तनिमेषं कि?चत् कालं रज्यति संि्यते।''

यह भी बात सत्य है कि महेश्वरानन्द का नाम गोरक्षनाथ भी था। यह बात उन्होंने स्वयं ही स्वीकार की है –

> ''गोरक्षो लोकधिया देशिकदृष्टया महेश्वरानन्दः (परिमल)।

सम्पूर्ण विवेचन के उपरान्त यह कहा जा सकता है कि आचार्य महेश्वरानन्द दक्षिणभारतीय शैव परम्परा के दीक्षित आचार्य थे, एवं अपनी ज्ञानपिपासा के शमनार्थ उन्होंने दक्षिण के साथ–साथ उत्तर भारत में अवस्थित काश्मीर शैवदर्शन से भी वह अन्त में अत्यधिक प्रभावित हुए तथा अपने विचारों एवं कृतियों से उन्होंने दोनों धाराओं को पल्लवित एवं पुष्पित किया।

संदर्भ ग्रन्था

1. शिवदृष्टि 7/107–121
2. महार्थम?जरी परिमल
3. महार्थम?जरी
4. विज्ञानभैरवविवृति
5. श्रीशिवानन्दमहाप्रकाशमहेश्वरानन्द प्रभृतिभियोगीन्द्रैः (परिमल–महार्थम?जरी)